JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

अमृतबिन्दूपनिषद (ब्रह्मबिन्दूपनिषद्) व त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् में मन की उपयोगिता

शिवराज सिंह शोधार्थी 22068, श्रध्दानन्द वैदिक शोध संस्थान, गुरुकुल कांगडी समविश्वविद्यालय, हरिद्वार 249404

भ्वादिगणी धातु से मनन जोड़ने पर मन धातु के धाऽतु की निष्पत्ति होती है जिसके अर्थ घमंड करना, पूजा करना। चुरादिगणी धातु से घमंडी होना, दिवादीगणी एवं तनांदिगणी धातु से सोचना, विश्वास करना, कल्पना करना,चिंतन करना, उत्प्रेक्षा करना, विचार करना, ध्यान करना, आदर करना, मानना, देखना, समझना, मान लेना, सम्मान करना, मूल्यवान समझना, बड़ा मानना, वरेण्य समझना, जानना, प्रत्यक्ष करना, पर्यवेक्षण करना, लिहाजा करना, स्वीकृति देना, अमल करना, विचार-विमर्श करना, इरादा करना, कामना करना, आशा करना, मन लगाना, श्रद्धा दिखाना, मूल्यवान समझना, इत्यादि अर्थ विकसित होते हैं। इसी धातु से मनन करना, सोचना, प्रज्ञा, तर्कसंगत, अनुमान, अंदाजा लगाना, अर्थों की भी प्राप्ति होती है। जिसमें करण अर्थ में असुन प्रत्यय का सहयोग होता है इस मन के मन, हृदय समझ प्रत्यक्ष ज्ञान, प्रज्ञा, संज्ञान, वह उपकरण जिसके द्वारा ज्ञेय पदार्थ आत्मा को प्रभावित करते है, चेतना निर्णय या विवेचन की शक्ति, सोच, विचार, उत्प्रेक्षा, कल्पना, प्रत्यय, योजना, प्रयोजन, अभिप्राय, संकल्प, रुचि. स्वभाव, तेज, ओज, सत्व, मानस नमक सरोवर आदि अर्थ भी निष्पन्न होते हैं।

आयुर्वेद में मन को सूक्ष्म इन्द्रिय और ज्ञान का उपादान माना है। इसकी उत्पत्ति के लिए आयुर्वेद तीन प्रमुख ग्रन्थों चरक संहिता सुश्रुत संहिता, अष्टाङ्गहृदय के साथ सांख्य शास्त्र का सहारा लेता है।

इससे स्पष्ट है कि मन का मूल अहंकार, अहंकार का मूल महत्त्व (बुद्धि) तथा बुद्धि का मूल प्रकृति। मन का जन्म विशेष रूप से तैजस अहंकार अर्थात रजोगुण प्रधान अहंकार से इन्द्रियाँ और मन प्रकट होते हैं। चरक संहिता में सात्त्विक अहंकार से मन और इन्द्रियाँ उत्पन्न होती हैं।

प्रकृति से शरीर के बनने के विवरण को बताते हुए अन्तः करण में मन बुद्धि चित्त और अहंकार को स्वीकार किया है। आकाश तत्व को मन, बुद्धि, चित्त, और अहंकार में अंश रूप में व्याप्त

संस्कृत हिन्दी कोष, वामन शिवरान आप्टे । पृष्ठ सख्या 770. 771
तत्र वैकारिकादहंकारात् मनसश्चेन्द्रियाणि जायन्ते।। चरक संहिता. सूत्रस्थान 1/22

स्वीकार किया गया है। पंच महाभूत के शेष तत्वों को अंश रूप में स्वीकार नही किया गया है[1]। ज्ञान ,संकल्प निश्चय अनुसन्धान अभिमान आकाश के कार्य है। अन्तः करण के विषय /क्रियाए है जनना /बोध,विचार करना ,निर्णय ,निरन्तर चिन्तन / स्मरण का संकेत प्रवाह ,में व मेरा की भावना का उत्पन्न होना मन, बुद्धि, चित्त, और अहंकार का विषय है। मन और बुद्धि में चित और अहंकार समाहित है । मन में चित या अहंकार समाहित है या मन में चित व अहंकार अंश रूप से समाहित है। बुद्धि में चित या अहंकार समाहित है या बुद्धि में चित व अहंकार अंश रूप में समाहित है । मन व बुद्धि पूर्णतः अलग अलग है चित व अहंकार अलग अलग है अन्तः करण दो भागो में बट गया है[2]।

मन को दो प्रकार का स्वीकार किया है एक शुद्ध प्रकार का मन और दूसरा अशुद्ध प्रकार का मन, शुद्ध प्रकार के मन को काम (जब इन्द्रियाँ विषयों से संपर्क करती हैं, तब उनमें आसक्ति उत्पन्न होती है वह काम है।) व संकल्प (पूर्ण रूप से कल्पना करना या निश्चित विचार बनाना या किसी कार्य को करने का/ न करने का विचार) से युक्त स्वीकार किया है और अशुद्ध मन को काम, इच्छा आदि से रहित स्वीकार किया है। काम व इच्छा से रहित मन क्या कार्य करेगा[3]। मनुष्य के शरीर में उपस्थित यह मन मोक्ष और बन्धनों का कारण बनता है जब यह मन इच्छाओं और काम के विषयों में लगा रहता है तब यह बन्धनों का कारण बनता है और जब विषयो और काम से भी अलग हो जाता है तब मोक्ष का कारण बनता है[4]।

मनुष्य का कामनाओं व् विषयों (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध आदि इन्द्रिय-विषय) को ग्रहण करने की इच्छा से रहित मन मनुष्य को मुक्ति के मार्ग पर ले जाता है। मोक्ष चाहने वाले मनुष्य को अपने मन को सदैव कामनाओ ,विषयों, इच्छाओं से रहित रखना चाहिए[5]। विषयों में आसक्ति (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध आदि इन्द्रिय-विषय) से रहित /पूर्णतः नियंत्रित / निरुद्ध अवस्था में पहुचा हुआ मन जब आत्म भाव (हृदि) में पहुँचता है तब परम पद /मोक्ष प्राप्त होता है[6]।

---

[1] *अथाकाशो अन्तःकरणमनोबुद्धि चित्ताहंकाराः* / वायुः समानोदानो-व्यानापानप्राणाः। वह्निः श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाप्राणानि। आपः शब्दस्पर्शल्य-रसगन्धाः। पृथिवी वाक्पाणिपादपायूपस्थाः । त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् ५

[2] *ज्ञान संकल्प निश्चयानुसन्धानाभिमाना आकाशकार्यान्तःकरणविषयाः* । समीकरणोत्रयनग्रहणश्रवणोच्छ्वासा वायुकार्य प्राणादिविषयाः । शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा अग्निकार्यज्ञानेन्द्रिविषया अबाश्रिताः। वचनादान-गमनविसर्गानन्दाः पृथिवीकार्य कर्मेन्द्रियविषयाः । कर्मज्ञानेन्द्रियविषयेषु प्राणतन्मात्रविषया अन्तर्भूताः । *मनो बुद्धयोश्चिताहंकारौ चान्तर्भूतौ* ।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् ६

[3] ओ३म् मनो हि द्विविधं प्रोक्तं शुद्धं चाशुद्धमेव च।
अशुद्धं कामसंकल्पं शुद्धं कामविवर्जितम् ।। अमृतबिन्दूपनिषद १

[4] मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः ।
बन्धाय विषयासक्तं मुक्त्यै निर्विषयं मनः ।। अमृतबिन्दूपनिषद २

[5] यतो निर्विषयस्यास्य मनसो मुक्तिरिष्यते।
अतो निर्विषयं नित्यं मनः कार्यं मुमुक्षुणा ।। अमृतबिन्दूपनिषद ३

[6] निरस्तविषयासङ्ग संनिरुद्धं मनो हृदि।
यदा यात्यात्मनोऽ भावं तदा तत् परमं पदम् ।। अमृतबिन्दूपनिषद ४

जिस प्रकार विभिन्न प्रकार के पशुओं के दूध में घी छुपा हुआ होता है उस घी को निकालने के लिए मनुष्य अनेकों प्रकार के मथनी का प्रयोग करके घी को निकलता है ठीक उसी प्रकार से प्रत्येक मनुष्य के शरीर में निवास करने वाले आत्म तत्व/ चेतन तत्व/ जीव को मन की मथनी का प्रयोग निरंतर करके मथना (आत्म तत्व को) चाहिए [7]। ज्ञान योग के माध्यम से मनुष्य को क्या जानना चाहिए और क्या नहीं जानना चाहिए की जानकारी प्राप्त कर लेने के पश्चात मनुष्य को जानने योग्य को पूर्ण रूप से स्वीकार कर लेना चाहिए यह सभी सिद्धियों को प्रदान करने वाला है और मन को स्थिरता प्रदान करने वाला है दो प्रकार के योग ,ज्ञान योग और कर्म योग है[8]।

साधना करने वाले योगी को अष्टांग योग यम ,नियम, आसन, प्राणायाम आदि को अपनाकर ज्ञान रूपी वर्तिया (ज्ञान को उत्पन्न करने वाली उच्च कोटि की **लक्षणात्मक**) योगी में उत्पन्न होते हैं। योगी साधना करते हुए अभ्यास के फल स्वरुप प्राणों को नियंत्रित करते हुए, मन को नियंत्रित करने का प्रयास करना चाहिए मन में उत्पन्न होने वाली विभिन्न प्रकार की कामनाओं और इच्छाओं को इस प्रकार से छोड़ने का प्रयास करना चाहिए जिस प्रकार से उस्तरे से बालों को काटकर शरीर से अलग कर दिया जाता है[9]। योगी को अपने मन को स्थिर अवस्था में करने का निरंतर प्रयास करना चाहिए (मन एक काग्रता लाने का प्रयास करना चाहिए) मन की एकाग्र अवस्था में प्राणवायु स्थिर अवस्था में आ जाती है[10]। कर्म योग के अनुसार स्वीकार किए गये कार्यों में मन को सदैव लगाए रखने का प्रयास करना चाहिए इससे पता चलता है कि कर्म योग में स्वीकार्य, कार्य मन को बांधने का प्रयास कर सकते हैं । संयमित चित्त वाले योगी सदैव उन कार्यो में लगे होते है जिनसे मन को नियंत्रित किया जा सकता है मन और चित का सम्बन्ध इस स्थान पर किए गए कार्यों से स्थापित किया गया है। क्या मन के अंदर चित् समाहित हो सकता है[11]

योग साधना करने वाले मनुष्य को मन के द्वारा प्राण वायु को नासिका के अग्र भाग पर, पैरों के अगुठे में, नाभि कन्द प्रदेश के मध्य भाग में (जिस स्थान से सभी नाड़ियो के उद्गम को स्वीकार किया गया है)

---

[7] घृतमिव पयसि निगूढे भूते भूते व वसति विज्ञानम्।
सततं मनसि मन्थयितव्यं मनोमन्धानभूतेन।। अमृतबिन्दूपनिषद २०

[8] ज्ञानयोगः स विज्ञेयः सर्वसिद्धिकरः शिवः ।
यस्योक्तलक्षणे योगे द्विविधेऽप्यव्ययं मनः ।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् २७

[9] तस्मादभ्यासयोगेन मनः प्राणान्निरोधयेत् । योगी निशितधारेण क्षुरेणैव निकृन्तयेत् ।
शिखाः ज्ञानमयी वृत्तिर्यमाद्यष्टाङ्गसाधनैः । त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् २२

[10] मनसो धारणादेव पवनो धारितो भवेत्।
मनसः स्थापने हेतुरुच्यते द्विजपुङ्गव । त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् ११४

[11] बन्धनं मनसो नित्यं कर्मयोगः स उच्यते।
यतचित्तस्य सततमर्थे श्रेयसि बन्धनम्।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् २६

सावधानीपूर्वक प्रातः मध्य आदि काल में सदैव स्थिर करने का प्रयास करना चाहिए [12]। योगी योग का अभ्यास निरंतर करते रहते हैं दोनों हाथों से कान आदि इन्द्रियों को विशेष प्रकार की विधि से बांधते हुए/ बंद करते हुए / रोकते हुए मन को नियंत्रण किया जा सकता है[13]।

योग के निरंतर अभ्यास करने से, मनुष्य अपने जीवन में आयु के नष्ट होने के कारणों को स्पष्ट रूप से जानकर अपने जीवन के परम लक्ष्य (मोक्ष या मुक्ति) के लिए जप और ध्यान जैसे साधनों से निरंतर प्रयासरत रहना चाहिए। मन से परमात्मा का ध्यान करते हुए उसके स्वरूप को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए [14]। योग साधना करने वाले योगी के लिए यम नियम आसन प्राणायाम आदि अष्टांग योग के अंतर्गत आने वाली साधना से मन को जो एकाग्रता /स्थिरता प्राप्त होती है वही धारणा योगी को इस संसार रूपी सागर से उतारने/पार करने का कारण बनती है[15]।

अनेक रूपों को धारण करने वाले ,अत्यंत शांत, प्रचण्ड, विविध प्रकार के आयुधों से युक्त, अनेक नेत्रों से युक्त, करोड़ सूर्य के चमक शीलता के समान प्रकाश को रखने वाले, दिव्य स्वरुप वाले परम तत्व का ध्यान करने से योगी के मन में उपस्थित सभी वर्तिया नष्ट हो जाती है[16] । इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किए जाने योग्य विषय की अनुपस्थिति में, मन व प्राण निश्चय ज्ञान से युक्त होकर परम शुद्ध स्वरूप परमात्मा/ ब्रह्म में लय को प्राप्त हो जाता है जिस प्रकार नमक पानी में मिल जाता है ठीक उसी प्रकार से जीवात्मा भी ब्रह्म में लीन हो जाता है[17]।

---

[12] नाभिकन्दे च नासाग्ने पादाङ्गुष्ठे च यत्नवान् ।
धारयेन्मनसा प्राणान् सन्ध्याकालेषु वा सदा।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् १०९

[13] बध्नन् कराभ्यां श्रोत्रादिकरणानि यथातथम्। युञ्जानस्य यथोक्तेन वर्त्मना स्ववशं मनः । मनोवशात् प्राणवायुः स्ववशे स्थाप्यते सदा। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् ११६

[14] एवमादीन्यरिष्टानि दृष्ट्वाऽऽयुः क्षय कारणम् । निःश्रेयसाय युञ्जीत जपध्यानपरायणः ।। मनसा परमात्मनं ध्यात्वा तद्रूपतामियात् । त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् १२८

[15] मनसो धारणं यत्तद्युक्तस्य च यमादिभिः।
धारणा सा च संसारसागरोतारकारणम्।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् १३४

[16] नानावर्णधरं देवं शान्तम् उग्रम् उदायुधम्। अनेकनयनाकीर्ण सूर्यकोटिसमप्रभम् ।
ध्यायतो योगिनः सर्वमनोवृत्तिर्विनश्यति । त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् १५५
[17] ग्राह्याभावे मनः प्राणो निश्चयज्ञानसंयुतः ।
शुद्धसत्वे परे लीनो जीवः सैन्धवपिण्डवत् ।। त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् १६४

निष्कर्ष मन में आकाश तत्व अंश रूप में पाया जाता है। क्या मन आकाश तत्व को अनुभव कर सकता है ? मन का सम्बन्ध चित व् अहंकार के साथ किस प्रकार का है ? मन को बन्धन का कारण माना है। इच्छा से रहित मनुष्य कार्य किस प्रकार करेगा ? आत्म भाव ह्रदि में होता है। ह्रदि का निवास शरीर में कहाँ है ? प्राणों , ज्ञान योग, कर्म योग, अष्टांग योग, से मन को नियंत्रित किया जा सकता है मन से प्राण को ,प्राण से मन को नियंत्रित किया जा सकता है योग के अलग अलग अभ्यास मन को शुद्ध करने का कार्य करते है मनुष्य के मन में अशुद्धिया किस स्वरूप में होती है ? यह मनोविज्ञान के द्रष्टि कोण से अति महत्वपूर्ण है शुद्ध होने वाला मन कितना विकसित होगा ?